अमर उजाला

नई दिल्ली । सोमवार, 15 अप्रैल 2019

प्रवाह

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक

स्थापना वर्ष : 1948

शांतिपूर्ण, विधिसम्मत प्रभावी विरोध स्वाभाविक रूप से यथास्थितिवाद के लिए विघटनकारी होता है...

- नाओमी वुल्फ

अमेरिकी नारीवादी लेखिका

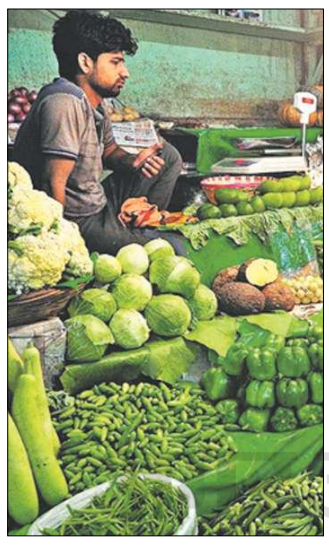

सत्ताईस साल के निचले स्तर पर पहुंची खाद्य मुद्रास्फीति उपभोक्ताओं के लिए भले अच्छी हो, लेकिन यह कृषि क्षेत्र में व्याप्त संकट की ओर भी इशारा करती है। जब किसानों की आय दोगुनी करने की बात हो रही है, तब यह आंकड़ा चिंतित करता है।

तलहटी पर खाद्य मुद्रास्फीति

पिछले कुछ साल से खाद्य पदार्थों के दाम में आई कमी एक हकीकत है, जो उपभोक्ताओं के लिए बेशक राहत की बात है, पर पिछले साल खाद्य मुद्रास्फीति का सत्ताईस साल के निम्नतम स्तर पर आ जाना बेहद चौंकाने वाला है, जो किसानों की दुर्दशा के बारे में भी बताता है। क्रेडिट रेटिंग एजेंसी क्रिसिल के मुताबिक, 2018-19 में उपभोक्ता मूल्य सूचकांक आधारित खाद्य मुद्रास्फीति में मात्र 0.1 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। खाद्य मुद्रास्फीति में आई इस गिरावट की कई वजहें हैं। जैसे कि पिछले तीन-चार साल में कृषि उत्पादन में अच्छी बढ़ोतरी हुई है। कच्चे तेल के दाम कम हैं, जो खाद्य मुद्रास्फीति बढ़ाने में बड़ी भूमिका निभाते हैं। अधिक खाद्यान्न उत्पादन के साथ आपूर्ति प्रबंधन भी बेहतर है। विगत फरवरी की मौद्रिक समीक्षा में खुद रिजर्व बैंक ने खाद्य मूल्यों में आई कमी की वजह बेहतर आपूर्ति को बताया था। दुनिया भर में खाने-पीने की चीजों के दाम कम हैं। विश्व बाजार में खासकर दाल की कीमत कम रहने से यहां भी इसके दाम कम हैं। ऐसे ही, सब्जियों के दाम लंबे समय से कम बने हुए हैं। खाद्य मुद्रास्फीति कम रहने का एक कारण उपभोक्ताओं की मांग में आया बदलाव भी है-यानी शहरी उपभोक्ताओं में खाद्य पदार्थों की मांग घटी है, जबकि सेवाओं की मांग बढ़ी है। एक अध्ययन इस गिरावट को नोटबंदी का दीर्घस्थायी असर भी बताता है, जिसके मुताबिक, निम्न मध्यवर्ग के पास खाने-पीने की चीजें खरीदने के लिए पर्याप्त पैसा अब भी नहीं है। कुल मिलाकर देखें, तो यह गिरावट उपभोक्ताओं के लिए अच्छी है-हालांकि आंकड़ों में जितनी कमी दिखाई जाती है, फल और सब्जियों को छोड़ दें, तो कीमत के मामले में उपभोक्ताओं को उतना लाभ होता नहीं है। अलबत्ता खाद्य मुद्रास्फीति में आई यह भारी गिरावट कृषि क्षेत्र के लिए बेहद गंभीर है, और बताती है कि किसानों का जीवन किस तरह बदहाल है-पिछले साल किसानों द्वारा किए गए कई आंदोलन वस्तुतः उनकी इस बदहाली के ही सुबूत थे। खाद्य मुद्रास्फीति कम होने का अर्थ यह है कि किसानों को उनकी उपज का कम मूल्य मिल रहा है। न्यूनतम समर्थन मूल्य में मामूली बढ़ोतरी के कारण भी यह स्थिति आई है। जिस वक्त किसानों की आय दोगुनी करने की बात कही जा रही है, उस समय यह आंकड़ा बेहद गंभीर और चिंताजनक है।

जलियांवाला : विरोध की वह अकेली आवाज

जलियांवाला बाग हत्याकांड के विरोध में जब गांधी का साथ रवींद्रनाथ को नहीं मिला, तब उन्होंने नाइट उपाधि त्यागने का फैसला करते हुए वायसराय को चिट्ठी लिखी थी। पर अमृतसर कांग्रेस में कविगुरु के त्याग का जिक्र नहीं हुआ।

सुब्रत मुखर्जी, सेवानिवृत्त प्रोफेसर

वर्ष 1919 में रवींद्रनाथ को महात्मा गांधी की एक चिट्ठी मिली, जिसमें अंग्रेजों से मोहभंग और रॉलेट ऐक्ट के खिलाफ विरोध की जरूरत के बारे में बताया गया था। रवींद्रनाथ का जवाब मिला-जुला था। जहां वह रॉलेट ऐक्ट के विरोध की जरूरत पर गांधी जी से सहमत थे, वहीं उन्हें तत्कालीन स्थितियों में नस्लीय घृणा और नफरत की भावना तेज होने का भी डर था। रॉलेट ऐक्ट के पारित होने के बाद राष्ट्रवादी आंदोलन का नया चरण शुरू हुआ और गांधी जी ने ऐक्ट को निरस्त करने के लिए सत्याग्रह आंदोलन शुरू करने की घोषणा की।

नौ अप्रैल को कोलकाता, अमृतसर, मुंबई और अहमदाबाद में पुलिस ने गोलीबारी की। महात्मा गांधी मुंबई से दिल्ली आने को तैयार थे, पर पुलिस ने उन्हें मुंबई में रहने के लिए मजबूर किया। लोगों को इस बात की जानकारी मिल गई। 10 अप्रैल को अमृतसर में डॉ. सैफुद्दीन किचलू और डॉ सत्यपाल को गिरफ्तार कर नजरबंद कर दिया गया। विरोध में लोगों ने जिलाधिकारी के बंगले का घेराव किया। प्रदर्शनकारियों को खदेड़ने के लिए पुलिस ने गोलियां चलाईं। अमृतसर, गुजरांवाला और कसूर में पुलिस और लोगों के बीच सड़क पर जमकर संघर्ष हुआ। पंजाब के गवर्नर माइकल ओ'डायर विरोध प्रदर्शन को सख्ती से कुचलना चाहते थे। इसके बाद पुलिस ने विरोध प्रदर्शन का सख्ती से दमन किया। 10 अप्रैल को पंजाब में किसी भी समाचार के प्रसार पर पूर्ण प्रतिबंध के साथ मार्शल लॉ लागू किया गया। नतीजतन पंजाब शेष भारत से पूरी तरह कट गया। अपने चरम पर पहुंचकर जैसे ही आंदोलन हिंसक हुआ, गांधी जी ने इसे निलंबित करने के बारे में सोचा। उन्होंने कहा कि अब वह समय आ गया है कि मुझे हिंसा के चलते अपने खिलाफ सत्याग्रह की पेशकश करनी चाहिए। उन्होंने उसे हिमालयी गलती कहा।

रवींद्रनाथ इन घटनाओं को करीब से देख रहे थे, क्योंकि वह इसके परिणाम से चिंतित थे। लेकिन जब आंदोलन गांधी जी के बताए रास्ते से भटकने लगा, तो उन्होंने 12 अप्रैल को उन्हें एक खुला पत्र लिखा, जो *इंडियन डेली न्यूज* में 16 अप्रैल को छपा। वह पत्र एक महत्वपूर्ण दस्तावेज था, जो कवि की विचार प्रक्रिया और चिंताओं को दर्शाता था। उन्होंने पत्र की शुरुआत गांधी जी को 'प्रिय महात्मा जी' कहते हुए की और आगे लिखा- 'सत्ता अपने सभी रूपों में विवेकशून्य होती है, यह उस घोड़े की तरह होती है, जो गाड़ी को अंधे मोड़ की तरफ ले जाती है। निष्क्रिय प्रतिरोध एक ऐसा बल है, जो जरूरी नहीं कि अपने आप में नैतिक हो, इसका इस्तेमाल सच्चाई के पक्ष के साथ-साथ इसके खिलाफ भी किया जा सकता है। सभी ताकत में निहित खतरा तब और मजबूत हो जाता है, जब इसके सफल होने की संभावना होती है, तब यह प्रलोभन बन जाता है। मैं जानता हूं कि आपकी सीख अच्छाई की मदद से बुराई के खिलाफ संघर्ष है। लेकिन इस तरह की लड़ाई नायकों के लिए है, न कि क्षणिक आवेग से संचालित लोगों के लिए। एक तरफ की बुराई स्वाभाविक रूप से दूसरी तरफ भी बुराई पैदा करती है, अन्याय हिंसा की ओर ले जाती है और बदला लेने की साहसिक इच्छा का अपमान करती है। दुर्भाग्य से ऐसी ताकत पहले ही हरकत में आ गई है और या तो घबराहट में या गुस्से के जरिये हमारे शासक ने हमें अपने पंजे दिखाए हैं, जिसका सुनिश्चित प्रभाव यह है कि हम में से कुछ लोग गुस्से के गुप्त पथ पर चल पड़े हैं, तो कुछ लोग अनैतिक पथ पर।'

यह आंदोलन पर एक गंभीर आरोप था, जिसे बिना किसी उचित अग्रिम तैयारी के साथ शुरू किया गया था। रवींद्रनाथ ने सत्ता की उस विवेकशून्यता पर ही सवाल नहीं उठाए-जो थॉमस हॉब्स के समय एक प्रमुख चिंता थी-एक औजार के रूप में निष्क्रिय प्रतिरोध के उपयोग और इसके अधःपतन की आशंका की बात भी कही। वह ऐसे आंदोलन के दो दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव को भी देख सकते थे, जो अपने वांछित अंत पर पहुंचने में विफल रहे-(अ) राज्य का बढ़ा दमन, जो आतंकवाद को हवा देता और (ब) दूसरा पूर्ण अनैतिकता और निराशा की ओर ले जाता। इन आलोचनाओं के बावजूद रवींद्रनाथ ने एक नेता के रूप में गांधी की महानता को स्वीकार किया। हालांकि उन्होंने गांधी को चेताया कि स्वतंत्रता का महान उपहार दान के माध्यम से लोगों को नहीं मिल सकता। आगे इसमें उन्होंने जोड़ा, हमें इसे पाने से पहले ही हासिल करना चाहिए। यह विजेता पर हमारी नैतिक श्रेष्ठता का प्रदर्शन करके ही हासिल किया जा सकता है।

बैसाखी के दिन 13 अप्रैल, 1919 को जलियांवाला बाग में नरसंहार हुआ था। मार्शल लॉ और सेंसरशिप के कारण दुनिया को तुरंत इस घृणित कार्य का पता नहीं चल सका। 18 अप्रैल को गांधी जी ने इस नरसंहार के लिए अंग्रेजों के बजाय अपने देशवासियों को ही जिम्मेदार ठहराते हुए सत्याग्रह वापस ले लिया। इससे अंग्रेज और भी खुलेआम दमन और अपमान के लिए प्रेरित हुए। रवींद्रनाथ को नरसंहार की तत्काल जानकारी नहीं मिली। एक-दो दिन के भीतर गांधी जी द्वारा आंदोलन वापस लेने की खबर अखबार में छपी।

रवींद्रनाथ ने गांधी के नेतृत्व पर भरोसा जताया और शांतिनिकेतन से कोलकाता चले गए तथा वहां नरसंहार के खिलाफ एक विरोध सभा आयोजित करने की कोशिश की, लेकिन चित्तरंजन दास समेत किसी भी नेता का उन्हें समर्थन नहीं मिला। उन्होंने सी. एफ एंड्रूयूज को गांधी जी के पास यह अनुरोध करने के लिए भेजा, तो गांधी जी ने जवाब दिया कि वह सरकार को शर्मिंदा नहीं करना चाहते। इसके बाद रवींद्रनाथ ने खुद नाइटहुड की उपाधि त्यागने का फैसला लिया और हाथ से लिखकर एक पत्र वायसराय को भेजा।

वह विरोध की अकेली आवाज थी, लेकिन उन्होंने देश के साथ-साथ बाहर के लोगों को भी अपने यादगार गीत *एकला चलो रे* को सच साबित कर दिखाया। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि 1919 की अमृतसर कांग्रेस में रवींद्रनाथ के उस त्याग का कोई जिक्र नहीं हुआ, जबकि वायसराय काउंसिल से सीएस नायर के इस्तीफे की प्रशंसा की गई। यहां तक कि पट्टाभि सीतारमैया ने भी *द हिस्ट्री ऑफ द इंडियन कांग्रेस* में रवींद्रनाथ के इस साहसिक कृत्य का कोई जिक्र नहीं किया है। रवींद्रनाथ का त्याग अनूठा था, उनमें लोकप्रिय होने की कोई इच्छा नहीं थी। गंभीर संकट के क्षणों में वह आम लोगों के साथ खड़े हुए।

अंतर्ध्वनि

>> राममनोहर लोहिया

किंवदंतियों में लोगों को सुसंस्कृत करने की ताकत होती है

किंवदंतियां एक तरह से महाकाव्य और कथा, कहानी और उपन्यास, नाटक और कविता की मिली-जुली उपज हैं। किंवदंतियों में अपरिमित शक्ति है और ये अपनी कौम के दिमाग का अंश बन जाती हैं। इन किंवदंतियों में अशिक्षित लोगों को भी सुसंस्कृत करने की ताकत होती है। लेकिन उनमें सड़ा देने की क्षमता भी होती है। थोड़ा अफसोस होता है कि ये किंवदंतियां बुनियाद में विश्ववादी होते हुए भी स्थानीय रंग में रंगी होती हैं। इससे लगभग वैसा ही अफसोस होता है, जैसा हर काल के, हर मनुष्य के, एक साथ और एक स्थान पर न रहने से होता है। मनुष्य जाति को अलग-अलग जगहों पर बिखर कर रहना होता है और इन जगहों की नदियां और पहाड़, लाल या मोती देनेवाले समुद्र अलग हैं। विश्ववाद की जीभ स्थानीय ही होगी। यह समस्या स्त्री-पुरुष और उनके बच्चों की शिक्षा के लिए बराबर बनी रहेगी। अगर विश्ववाणी से स्थानीय रंग दूर किया जाए, तो इस प्रक्रिया में भावनाओं का चढ़ाव-उतार खत्म हो जाएगा, उनका रक्त सूख जाएगा और वह एक पीली छाया के समान रह जाएगी।

शब्द के मतलब कुछ और भी होते हैं, सिवाय उनके नाम या जिसके लिए उसका इस्तेमाल होता है। इनका पूरा मतलब और मजा उस स्थान और उसके इतिहास से लगातार रिश्ता होने पर ही मिल सकता है। गंगा एक ऐसी नदी है जो पहाड़ियों और घाटियों में भटकती फिरती है, कलकल निनाद करती है, लेकिन उसकी गति मंदगामिनी है। गंगा का नाम गम् धातु से बना है, जिससे गमगम संगीत बनता है, जिसकी ध्वनि सितार की थिरकन के समान मधुर है। गंगा और यमुना के बीच आदमी मंत्रमुग्ध-सा खड़ा रह जाता है कि ये कितनी समान हैं, फिर भी कितनी अलग। उनमें से किसी एक को चुनना बहुत मुश्किल है। ऐसी स्थानीय आभा से विश्ववाणी निकलती है।

-दिवंगत समाजवादी नेता

मंजिलें और भी हैं

>> ईश्वर पिंडोरिया

बंजर जमीन पर सफलता की कहानी लिखी

मैं गुजरात का रहने वाला हूं। मेरा गांव भुज से करीब बीस किलोमीटर दूर और कच्छ के रण के नजदीक है। चूंकि हमारे गांव के आसपास की जमीन बंजर है, इसलिए मुझे बचपन से ही सरकारी नौकरी में जाने के बारे में प्रोत्साहित किया जाता था। दरअसल पहले हमारे यहां खेती होती थी, लेकिन धीरे-धीरे जमीन बंजर होने लगी, तो दादाजी के समय से खेती-किसानी का पुश्तैनी काम छोड़ना पड़ा। मुझे भी पढ़-लिखकर बड़ी नौकरी करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता रहा। लेकिन न जाने क्यों, बहुत छोटी उम्र में खेती करने की मुझमें इच्छा जागती। कभी-कभी मैं सोचता कि अगर मेरे पास खेती की अपनी जमीन हो, तो मैं उसमें अपनी पसंद की चीजें उपजाऊंगा। लेकिन ऐसा होना नहीं था, इसलिए मैंने पायलट बनने के बारे में सोचा, क्योंकि आसमान में उड़ते जहाज मुझे बहुत अच्छे लगते थे। राजकोट से पढ़ाई संपन्न करने और वड़ोदरा में पायलट की ट्रेनिंग पूरी करने के बाद मैं अपने सपने को साकार करने के करीब पहुंच चुका था। लेकिन तकदीर ने ऐसी पलटी खाई कि मुझे पायलट बनने की इच्छा छोड़ कंकरीट के पाइप बनाने के मेरे पिता के कारोबार से जुड़ना पड़ा। मैं आज भी अपने पिता के कारोबार को सफलता से संभाले हुए हूं, पर मुझे खुशी है कि ईश्वर ने शौकिया खेती करने के मेरे सपने को साकार कर दिया। वर्ष 2006 में खेती के लिए मैंने चालीस एकड़ जमीन खरीदी। मेरा एक दोस्त भी इस योजना में मेरे साथ था। चूंकि इस्राइल ने बंजर जमीन पर खेती कर दुनिया को दिखाया है, इसलिए उस खेती को नजदीक से देखने-समझने मैं अपने दोस्त के साथ इस्राइल गया। मैंने पाया कि वहां की जमीन भी हमारे यहां की जमीन जैसी ही है। पर इस्राइली किसान उस जमीन पर खजूर और ताड़ उगाकर भारी मुनाफे में हैं। मैंने अपने दोस्त से बात की, इस्राइल के कुछ किसानों से सलाह ली, फिर खजूर की अच्छी प्रजाति के कुछ पौधे वहां से ले आया। इसके अलावा मैंने आम और अनार के पौधे भी लगाए। सिंचाई के लिए मैंने इस्राइल की सब-सरफेस इरिगेशन प्रणाली अपनाई, जिसके तहत पानी जमीन की ऊपरी सतह पर न डालकर निचली सतह पर डालते हैं। इसमें जमीन की ऊपरी सतह सूखी ही रहती है, पर पौधे को पोषण मिलता है। सिंचाई की इस व्यवस्था से पानी की खपत कम होती है और फसल भी अच्छी होती है। मैंने मिट्टी की नमी मापने के लिए कैलिफोर्निया से उपकरण भी मंगाए। मैं खाद के लिए किचन में बचे अवशिष्ट और खजूर के पत्तों का इस्तेमाल करता हूं। पिछले कुछ वर्षों में खजूर का उत्पादन बढ़ने से मेरा आत्मविश्वास बढ़ा है। पहले मैं कुछ निर्यातकों को खजूर बेचता था। लेकिन पिछले साल मैंने एक कोल्ड स्टोरेज बनवाया और अपने माल का निर्यात खुद करता हूं। जर्मनी में मेरे फार्म के उत्पादों की तारीफ हुई और इन्हें इस्राइली उत्पादों के बराबर का ही बताया गया। मेरी सफलता ने आसपास के अनेक लोगों को इस तरह की खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया है। इनमें वे लोग भी हैं, जो पहले आशंका जता रहे थे कि खेती में किया जा रहा मेरा निवेश डूब जाएगा। पिछले साल नई दिल्ली स्थित इस्राइली दूतावास ने मुझ पर एक डॉक्यूमेंटरी बनाई। अब इस्राइल के किसान मेरे फार्म को देखने और मुझसे सीखने आते हैं।

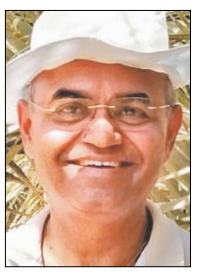

खजूर का उत्पादन बढ़ने से आत्मविश्वास बढ़ा है। अब इस्राइल के किसान मुझसे सीखने आते हैं।

-विभिन्न साक्षात्कारों पर आधारित।

हिमालयी मुद्दे नदारद

पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन, हिमालय, गंगा, कश्मीर, पूर्वोत्तर राज्यों आदि की चर्चा तो राजनीतिक दलों के चुनावी घोषणापत्रों में जरूर है, पर गंभीरता से नहीं। हिमालय के विकास का मिजाज क्या हो, यह राष्ट्रीय प्रश्न है।

हाल के वर्षों में देश के जीवन-मरण के अनेक सवाल पृष्ठभूमि में डाल दिए गए। ऐसा पहले भी होता रहा है। संसाधनों की लूट कई तरह से बढ़ी। इसका असर दूरस्थ भारत में सबसे ज्यादा पड़ा। हिमालय, गंगा तथा पर्यावरण ही नहीं, राष्ट्रीय स्तर पर जमीन, पानी और जंगल से जुड़े सवाल भी महत्व नहीं पा सके। नई आर्थिक नीति का दुष्प्रभाव लगातार ग्रामीण जीवन पर असर करता रहा। सड़कों के नाम पर जरूर ऐतिहासिक खुदाई हुई और पहली बार हिमालय में इतनी चौड़ी सड़कें बनाने का जोखिम उठाया गया, जिसकी पर्यावरण इजाजत नहीं देता। पेड़ों के कटान की भी अनदेखी की गई। अब चुनाव के समय पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन, हिमालय, गंगा, कश्मीर, पूर्वोत्तर राज्यों आदि की चर्चा तो राजनीतिक दलों के चुनाव घोषणापत्रों में जरूर है, पर गहराई और गंभीरता से नहीं।

भाजपा ने हिमालय पर राष्ट्रीय मिशन की शुरुआत जरूर की, हालांकि इसका खाका पहले बन गया था। नीति आयोग ने विगत नवंबर में हिमालयी राज्यों की एक क्षेत्रीय काउंसिल बनाने की घोषणा की, पर उसका कोई सर्व हिस्सेदारी वाला सम्मेलन कभी नहीं हो सका। इस तरह की परिषद पूर्वोत्तर के राज्यों में पहले से है, जो वहां के भूमिगत तथा सशस्त्र आंदोलनों को नियंत्रित नहीं कर सकी है। नीति आयोग अपने पूर्ववर्ती योजना आयोग की कम से कम एक दर्जन से अधिक महत्वपूर्ण रिपोर्टें देखने-समझने का प्रयास नहीं कर सका, जिनमें बहुत गंभीरता से हिमालय, पश्चिमी घाट, पूर्वोत्तर भारत तथा अरावली आदि पर पर्यावरण संरक्षण, आर्थिक विकास तथा संसाधनों की हिफाजत के सुझाव दिए गए थे।

शेखर पाठक

अभी हिमालयी तकनीकी विश्वविद्यालय की स्थापना की बात की गई है, पर हिमालय में एक स्वायत्त संस्थान की बात पिछली घोषणा से आगे नहीं बढ़ सकी है। भाजपा ने ऐसे कार्यक्रम चलाने का आश्वासन जरूर दिया है, जिनसे हिमालयी ग्लेशियरों के तेजी से पिघलने को नियंत्रित किया जा सके, तो कांग्रेस ने पर्यावरण संरक्षण प्राधिकरण बनाने तथा गंगा प्राधिकरण का बजट दोगुना करने का आश्वासन दिया है। पर हिमालय, पश्चिमी घाट, विंध्य, अरावली जैसे अन्य पहाड़ी क्षेत्र तथा तमाम जनजातीय क्षेत्रों के बारे में दो राष्ट्रीय दलों के चुनाव घोषणापत्रों में ज्यादा प्रतिबद्धता दिखाई नहीं देती। दक्षिण भारत के पश्चिमी घाट क्षेत्र के पांच राज्यों ने गाडगिल समिति के सुझाव नहीं माने और केरल को पिछले साल उसका दुष्परिणाम झेलना पड़ा। भविष्य में गोवा को भी संकट झेलना पड़ सकता है, क्योंकि वहां बहुत अधिक खनन हो रहा है। हिमालय के मामले में अब ज्यादातर स्थानीय मुद्दे गायब होते जा रहे हैं। हिमालय के विकास का मिजाज क्या हो, यह राष्ट्रीय प्रश्न है, जिसे संकीर्ण नजर से नहीं तय किया जा सकता।

सिर्फ हिमालय, गंगा, देवभूमि या पवित्र क्षेत्र की रट न हिमालय को संरक्षण देगी, न सम्मान। इससे आगे जाना होगा। भारतीय हिमालय और पश्चिमोत्तर राज्यों से चालीस से अधिक सांसद चुने जाते हैं, जो हिमालयी नीति अपनी शर्तों पर नहीं बना सकते। जयराम रमेश ने पर्यावरण मंत्री के रूप में कुछ कठिन निर्णय हिमालय के संबंध में लिए थे, जिस कारण उन्हें हटा दिया गया था। तब हिमालय क्षेत्र के सांसद उनके पक्ष में खड़े नहीं हो सके थे। पूर्वोत्तर के पीडी राय जैसे कुछ सांसदों या प्रदीप टम्टा जैसे सांसद हिमालय में बड़े बांधों और अवैज्ञानिक खनन का निरंतर विरोध करते रहे हैं, पर केंद्र सरकार या उनकी पार्टी उनको उस गंभीरता से नहीं सुनती, जिसकी दरकार है।

हरियाली और रास्ता

प्रोफेसर, नोट और आईआईटी

एक प्रोफेसर की कहानी, जिसने छात्रों को उनका महत्व बताकर सफलता के लिए प्रेरित किया।

आईआईटी के एक प्रोफेसर अंबुज नाथ ने फैसला किया कि वह बारहवीं फेल छात्रों को कोचिंग देकर आईआईटी में दाखिले के लिए तैयार करेंगे। दोस्तों ने उनका मजाक उड़ाया, क्योंकि आम तौर पर टॉपर के लिए भी आईआईटी की परीक्षा निकाल पाना आसान काम नहीं होता। पर प्रोफेसर अंबुज ने तय कर लिया था कि अब यही उनका लक्ष्य है। पहले बैच में उन्हें 17 छात्र मिले। छात्रों से उन्होंने पूछा, आपमें से कितनों को लगता है कि आप अनमोल हैं और समाज में आपकी कद्र है। सभी छात्र बारहवीं फेल थे, लिहाजा उनमें से किसी ने हाथ नहीं उठाया। प्रोफेसर ने कहा, मेरी इस क्लास का पहला सबक यही है कि आप अपना महत्व समझें। तब सफलता भागकर आपके पास आएगी। फिर उन्होंने अपनी जेब से 500 रुपये का एक नोट निकाल कर उन्हें दिखाते हुए कहा, अगर मैं यह नोट देना चाहूं, तो आपमें से कितने लोग लेना चाहेंगे? सभी ने हाथ खड़े कर दिए। फिर प्रोफेसर ने उस नोट को गीली मिट्टी से भरे एक मग में डाल दिया और उस गंदे से नोट को निकालकर पूछा, अब कितने लोग इसे लेना चाहेंगे? फिर सभी ने हाथ खड़े कर दिए। उसके बाद प्रोफेसर अंबुज ने नोट को जमीन पर फेंककर उसे पैर से मसल दिया, फिर कहा, अब इस नोट को कौन लेना चाहेगा? सबने नोट देखकर मुंह बनाया, पर हाथ सबने खड़े कर दिए। प्रोफेसर ने कहा, देखा, नोट चाहे मिट्टी में सना हो, या दबा-कुचला हुआ हो, उसकी कीमत कभी कम नहीं होती। ठीक वैसे ही हमें भी हमारी कीमत पहचाननी चाहिए। क्षणिक विफलता के बीच हमारे प्रयास और मानसिकता वापस हमें खींचकर उस जगह पहुंचा देगी, जिसके हम योग्य हैं। प्रोफेसर अंबुज की उस क्लास से 11 बच्चों का चयन आईआईटी में हुआ।

हमारी योग्यता का एक महत्वपूर्ण आकलन हमारी सोच है।

खुली खिड़की

हीरे की कीमत

वर्ष 1960 में हीरे की कीमत जहां प्रति कैरेट 2,700 डॉलर थी, वहीं 2015 में उसकी कीमत बढ़कर 29,650 डॉलर प्रति कैरेट हो गई और अभी उसकी कीमत 28,400 डॉलर प्रति कैरेट है।

स्रोत-Ajediam

श्रद्धावान कौन है

वाजश्रवा के दो शिष्यों धर्मद और विराध में विवाद छिड़ गया। दोनों अपने-अपने को अधिक श्रद्धावान बता रहे थे। दोनों गुरु के समीप आए और फैसला सुनाने का आग्रह किया। गुरु ने कहा, तुम दोनों पहले अपनी-अपनी श्रद्धा की व्याख्या करो। उसके बाद ही मैं इस पर कोई निर्णय दे पाऊंगा।

धर्मद ने कहना शुरू किया, गुरुदेव, इस आश्रम में मैंने आज तक आपकी हर बात मानी है। मैंने इसमें उचित-अनुचित का भी विचार नहीं किया। आपकी किसी भी आज्ञा को तर्क या विवेक की कसौटी पर परखने का प्रयत्न भी नहीं किया। आप ही बताएं गुरुवर, क्या इससे भी अधिक कोई श्रद्धा हो सकती है? यह सुनकर गुरुदेव मुस्कराए।

सत्संग

अब उन्होंने विराध से अपनी बात कहने के लिए कहा। विराध बोला, गुरुदेव, मुझमें ज्ञान की प्रबल आकांक्षा है। इसके साथ-साथ मेरी आप पर अगाध श्रद्धा भी है। इसलिए आपकी हर बात को मैं तर्क और औचित्य की कसौटी पर कसने का भी प्रयास करता हूं। मैं हमेशा यह परखने की कोशिश करता हूं कि आप जो भी बात कहते हैं, कहीं वह सत्य से परे तो नहीं है। सत्य का मूल्य सबसे अधिक है, इसलिए मैं सत्य को पाने के लिए सर्वस्व त्यागने को भी तैयार रहता हूं। निर्णय आपको करना है, गुरुवर। गुरुदेव धर्मद की ओर देखकर बोले, वत्स, सत्य को परख कर धारण की जाने वाली श्रद्धा ही श्रेष्ठ है।

-संकलित

https://t.me/SSC4Eams